International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 12-09-2020; Accepted: 27-09-2020; Published: 13-10-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 5; 2020; Page No. 97-100

उपन्यास 'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा' की संवेदनात्मक अनुभूति

साधना यादव
शोध अध्येता, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश, भारत

प्रस्तावना

'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा' हिन्दी साहित्य का चर्चित उपन्यास है, जिसे वरिष्ठ कथा लेखिका चित्रा मुद्गल ने लिखा है। चित्रा मुद्गल ने अपने प्रत्येक उपन्यास में एक नई कथा–भूमि का समावेश किया है। 'एक जमीन अपनी' से लेकर 'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा' तक इसे देखा जा सकता है। हम जानते हैं कि चित्रा जी ने सामाजिक, आर्थिक, मानवीय अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाले विभिन्न वर्गों, विशेषकर महिलाओं, श्रमिकों, दलितों व वंचित, उपेक्षित बुजुर्गों के बीच रहकर उनके न्यायिक अधिकारों के लिए विशेष काम किया है। ऐसी स्थिति में उनका साहित्य इन सबसे अछूता कैसे रह सकता है। 'एक जमीन अपनी' और आवां ट्रेड यूनियन एवं गैर सरकारी संगठनों में काम कर रही लड़कियों के माध्यम से स्त्री स्वातन्त्र्य की अपेक्षा करता है, वहीं 'गिलिगडु' समाज में बुजुर्गों के प्रति उपेक्षित व्यवहार का चित्रण करता है। परन्तु चित्रा जी यहीं नहीं रूकी। वे इसके आगे की कड़ी का निरन्तर बढ़ाती रहीं। उन्होंने समाज के उस हिस्से को अपने 'पोस्ट बॉक्स नं. 203 नाला सोपारा' में जगह दी, जिसे लैंगिक पहचान के स्पष्ट खांचे (स्त्री, पुरुष) में समाहित न होने के कारण हिजड़ा या किन्नर के रूप में जाना जाता है। हिजड़ों के लिए किन्नर शब्द का प्रयोग ठीक उसी तरह लगता है जैसे महात्मा गांधी ने अछूतों के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया था। सम्मान की चाशनी में डुबोया हुआ 'किन्नर' शब्द उतना ही दुखदायी है, जितना हिजड़ा, उभयलिंगी, ख्वाजासरा, ट्रांसजेंडर, खोजवा, खुसर, नपुंसक, छक्का, खिचड़ी इंटरसेक्स, ट्रांससेक्सुअल, इत्यादि।

भारत जैसे देश में जहाँ शिवलिंग और योनि की पूजा होती है, अर्धनारीश्वर रूप की सामाजिक स्वीकृति है, जहाँ यह माना जाता है कि मनुष्य के भीतर स्त्री और पुरुष दोनों के भावों का समावेश उसे सफलता की ओर ले जाता है, वहाँ पर इन दोनों से भिन्न किन्नर व्यक्तित्व को हाशिए पर धकेल दिया जाता है। जहाँ सभ्यता और संस्कृति का दम्भ भरा जाता हो। वहाँ केवल जैविक विकार के कारण व्यक्तियों को पशुवत् जीवन जीना पड़ता हो तो इसे त्रासद विडम्बना नहीं तो और क्या माना जाय!

पिछले दशकों में संवैधानिक और सामाजिक संस्थाओं द्वारा उनके अधिकारों को लेकर प्रश्न भी उठाया गया, जिससे वे वंचित रखे गये और समाज में वंचना एवं धिक्कार के पात्र बने रहे हैं। इन संस्थाओं के संघर्षों के फलस्वरूप ही समाज में इनके प्रति संवेदनशीलता का विकास हुआ है और इस वर्ग के लोग राजनीतिक परिदृश्य और सरकारी नौकरियों में उच्च पदों पर पहुँच रहे हैं, भले ही इनकी संख्या में कमी है। पिछले दिनों पश्चिम बंगाल में लड़कियों के एक कॉलेज में प्रिन्सिपल के पद पर इस वर्ग के एक सदस्य की नियुक्ति हुई, वहीं लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी और गौरी सावंत जैसे नाम उभर कर सामने आए हैं, जिन्होंने अपने अनुभवों को आत्मकथा तथा संस्मरणों में व्यक्त किया है। लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी की आत्मकथा 'मैं हिजड़ा मैं लक्ष्मी' को इस दृष्टि से व्यापक स्वीकृति मिली। इसे पढ़कर उनकी संघर्ष यात्रा को बहुत कुछ जाना जा सकता है, लेकिन ये उदाहरण एक अपवाद से आगे नहीं बढ़ पाते।

पारिवारिक मांगलिक कार्यों, पर्वों उत्सवों पर इनकी उपस्थिति को प्रायः संदिग्ध दृष्टि से देखा जा सकता है। ट्रेनों, बसों, बाजारों में भी इनको देखा जा सकता है जो मुख्य रूप से वसूली करते हुए पाए जाते है इनके लिए यह मुख्य धन्धा है। इसके लिए इनका तर्क होता है– समाज में उपेक्षा और आर्थिक साधनों की अल्पता। शास्त्रों में इनकी उपस्थिति शुभ सगुन के रूप में भले ही दर्ज हो परन्तु समाज में उनके प्रति मानवीय और संवेदनशील व्यवहार का घोर अभाव है। जो शिकायत हम समाज से करते हैं संवेदनहीनता, अमानवीय दृष्टि और उपेक्षा की, उसकी शुरुआत कहीं न कहीं घर से होती है इसी दास्तान को बयां करते हुए चित्रा जी का उपन्यास 'पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा' का कथा नायक विनोद से बिमली बनने तक का सफर तय करता है। सत्ता और समाज के आपसी गठजोड़ के मध्य अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहे तीसरी सत्ता का कठोर और मार्मिक बयान हैं। उपन्यास का नायक विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली प्रतीक है, उस समाज का जिसे सदियों से मुख्यधारा से दूर ही नहीं बल्कि जानबूझकर और सोची समझी रणनीति के तहत उन्हें शारीरिक और मनोवैज्ञानिक स्तर पर भी चोट पहुँचाई गई। उपन्यास में बिन्नी अपनी माँ को चिटि्ठयों के माध्यम से अपने जीवन के हर पहलू से परिचित कराता है माँ के बहाने ही हम पाठक भी उस दर्द से गुजरते है जिस दर्द से बिन्नी और उसकी माँ गुजर रहे हैं– ''सामाजिकता की संवेदना से शून्य हो गए है सभी। दरवाजों पर ही काठ के पल्ले नहीं जुड़े हुए हैं। हृदय भी कठकरेज हो गए हैं।''[1]

विनोद की लिखी हुई चिठ्ठियाँ भारतीय समाज के मुँह पर एक करारा तमाचा है जो अपनी मानवीयता, सभ्यता–संस्कृति का बखान करता फिरता है। उपन्यास का नाम या शीर्षक भी अपने में गहरे अर्थ को भरे हुए है। यह विनोद की चिठ्ठियों के पहुँचने का पता है लेकिन ये उसके घर का पता नहीं उस इलाके के पोस्ट बाक्स का पता है। माँ ने कहा है वह इसी पते पर चिठ्ठियाँ भेजा करें क्योंकि वह अपने परिवार और रिश्तेदारों के लिए मर चुका है। वर्षों पहले लोकलाज के भय से विनोद के पापा ने जान पहचान वालों से उसे मृत घोषित कर दिया था तब से उसे मृत ही मान लिया गया था। उसके पिताजी ऊपर से कठोर बन गए परन्तु बिन्नी की माँ तो कठोर नहीं बन पाई। विनोद पूछता है– ''पता पोस्ट ऑफिस का है, मेरे घर का नहीं। मेरे घर का पता क्या कहीं कोई है बा? कैसी विभ्रम की स्थिति में जीता हूँ मैं ...।''[2] पूरी व्यवस्था से पूछा गया सवाल है यह जिसने एक बच्चे को अपनी माँ से दूर कर दिया, उसकी शिक्षा पूरी नहीं होने दिया, उसकी आँखों में तैर रहे भविष्य के सुनहरे सपने तक को छीन लिया।

चित्रा मुद्गल ने अपने उपन्यास के माध्यम से हाशिए के किन्नर समाज की प्रमुख समस्याओं को उठाया है जिसमें, समाज में उपेक्षा के कारण कुण्ठित जीवन, यौन समस्या, शिक्षा की समस्या,

समाज में किन्नरों के प्रति हीन–भावना, किन्नरों के बहाने स्त्री का अपनी कोख पर अधिकार, किन्नरों को लेकर होती रही राजनीति, घर वापसी की एक मुहिम, जीरो अदर्स से मुख्य धारा में उनका जुड़ाव कर, किन्नरों के मनुष्य होने की जद्दोजहद को प्रस्तुत किया है। मुम्बई के उच्च मध्यमवर्गीय परिवार में विनोद का जन्म हुआ है जो जन्म से जननांग विकृति का शिकार है शायद इसी कारण उसकी बा वन्दना बेन उसके प्रति अधिक मोहविष्ट हैं। अपने भाई मंजुल को देखकर वह अपनी बा से पूछता है– ''बा, मेरे नुन्नू क्यों नहीं हैं।''[3] यह प्रश्न पूरे उपन्यास की संरचना में भयावहता को लिए हुए दिखाई पड़ता है। विनोद स्कूल में मेधावी छात्र है परन्तु 14 की उम्र में चम्पाबाई उस पर अपने समुदाय का हक जताते हुए लेकर चली जाती है। जिससे सामाजिक, सांस्कृतिक और परिवेशगत विस्थापन से उसके भीतर कुण्ठा का भाव आने लगता है– ''जिस जिन्दगी का हिस्सा मुझे बना दिया गया था, वह इतना आकस्मिक और अविश्वसनीय था कि मेरा किशोरमन उसे किसी भी रुप में पचा पाने में असमर्थ था।''[4]

उसके साथ जिन्दगी का यह मजाक यहीं नहीं रुकता। विधि की विडम्बना देखिये कि उसे अपने सहपाठी ईशान से पता चलता है कि स्कूल में उसके जूनागढ़ दुर्घटना में मृत्यु की सूचना दी गई है तब अपनो के द्वारा की गई इस उपेक्षा के कारण स्वयं को खत्म करने की सोचने लगता है– ''कैसे जन्मू यह तो नहीं चुन पाया। मौत चुन सकता हूँ। शहर में मरुँगा तो लाश किन्नरों के हाथ लगेगी। किन्नरों के विधि–विधान से मौत का निपटारा होगा। किन्नर के रुप में मैं मरना नहीं चाहता।''[5] विनोद स्वयं को कभी किन्नर नहीं स्वीकार कर पाता वह हमेशा पुरुष के रुप में ही अपनी पहचान बनाना चाहता है। वह किन्नरों की तरह ताली बजाना, मेकअप करना, वसूली करना पसन्द नहीं करता इसके लिए उसे कई बार प्रताड़ित भी किया जाता है– ''सारी प्रताड़ना के बावजूद वह उनकी बात स्वीकार नहीं करता और अन्त तक अपनी जिद पर डटा रहता है उनके लात–घूसे थप्पड़ और बातों में गर्म तेल सी टपकती किसी भी सम्बन्ध को न बख्शने वाली अश्लील गालियों के बावजूद न मैं मटक–मटक कर ताली पीटने को राजी हुआ न सलमें–सितारे वाली साड़ियाँ लपेट कर लिपिस्टिक लगा कानों में बूंदे लटकाने को ...।''[6]

जब हम भारतीय इतिहास में अपनी दृष्टि जमाते हैं तो पाते है कि नृत्य–गीत वसूली आदि कार्य किन्नरों ने इस रुप में कभी नहीं किया जैसे आधुनिक समय में करते हैं। ऐसा लगता है कि आधुनिक समय में घर और समाज की उपेक्षा के कारण ही अपने कुण्ठित मन में एक नई रंगीनिया भरने हेतु ही इस रास्ते को अपनाया होगा। विनोद जब अपनी बिरादरी के लिए नए शब्द किन्नर को सुनता है तो वह और व्यथित हो जाता है अपनी बा से कहता है– ''खुद यह सोचने पर विवश हो जाता है कि क्या शब्द बदल देने भर से अवमानना समाप्त हो सकती है? गालियों की गाली हिजड़ा को किन्नर कह देने भर से क्या देह के नासूर छिटक सकते हैं? परिवार के बीच से छिटककर नारकीय जीवन जीने को विवश किये जाने वाले ये 'बीच के लोग' आखिर मनुष्य क्यों नहीं माने जाते हैं।''[7] निश्चित रूप से बिन्नी की आत्मग्लानि बढ़ती है उसे अफसोस भी है वह ऐसा क्यों है! किन्नर बिरादरी ने स्वीकार कर लिया है कि उसे हंसी ठिठोली छिछोरापन अच्छा नहीं लगता। कुण्ठाएँ पूर्ण मनुष्यों में भी पाई जाती है विधायक जी का भतीजा और उसके चार दोस्तों द्वारा पूनम जोशी के साथ किया गया कुकृत्य इसी कुण्ठा का रुप है। जबरदस्ती उसके कमरे में घुस जाते हैं और पूनम जोशी के आपत्ति प्रकट करने पर कि उसे कपड़े बदलने हैं वे कमरे से बाहर जाएं इस पर वह कहते हैं– ''कपड़े वे बदल देंगे उसके। बस! वह उनकी एक दिली ख्वाहिश पूरी कर दे। हिजड़ों का गुप्तांग नहीं देखा है उन्होंने ... दो ने झटके से उसका चूड़ीदार खींच ... दो ने टाँगों को उठाकर चीरने वाले अन्दाज में फैला दिया ... पाशविकता का नृशंस नाच चरम पर पहुंचकर बारी–बारी स्खलित हो गया।''[8]

जननांग विकलांगता को दोष मानकर तृतीय सत्ता को मनुष्य न समझने की रुढ़िगत धारणा पर भी लेखिका ने बार–बार जोर दिया है। विनोद यौन सुख से भले ही वंचित है परन्तु वह अपनी कल्पना में ही ज्योत्सना के साथ घर बसाकर बच्चा गोद लेने की लालसा मन में रखता है अर्थात् वात्सल्य सुख से वंचित नहीं किया जा सकता। वर्तमान समय में गौरी सावंत उसका प्रमुख उदाहरण है उन्होंने दिखा दिया कि ममता किसी लिंगीय खाचे की मोहताज नहीं है। थर्ड जेंडर को जिलाए रखने की साजिश जिस परिपाटी में की गई है विनोद उसे स्वीकार नहीं कर पाता– ''जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है लेकिन इतना बड़ा भी नहीं कि तुम मान लो कि तुम धड़ का मात्र वही निचला हिस्सा भर हो। मस्तिष्क नहीं हो, दिल नहीं हो, धड़कन नहीं हो, आँख नहीं हो। तुम्हारे हाथ–पैर नहीं हैं। हैं, हैं, हैं, सब वैसा ही है जैसे औरों के हैं। यौन सुख लेने–देने से वंचित हो तुम, वात्सल्य सुख से नही! सोचो।''[9]

सामाजिक उपेक्षा के कारण ही किन्नरों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। समर्पण में प्रयुक्त 'नरोत्तम' थर्ड जेण्डर के प्रति लेखिका के उच्च दृष्टिकोण का परिचायक है नरोत्तम अर्थात् नरों में उत्तम, जो उत्तम है, जो सामान्य से भिन्न है, अनुपम है उसे तो सामाजिक प्रतिष्ठा का अधिकारी होना चाहिए, न कि सामाजिक उपेक्षा का शिकार बनाकर सामान्य जीवन से भी वंचित कर दिया जाना चाहिए। यह हमारे समाज का विरोधाभास है कि दूसरों के जन्म पर बधाई गाने वाले और आशीर्वाद देने वाले स्वयं अपने जन्म के साथ ही अंधेरों को स्वीकार करने के लिए अभिशप्त हैं। वह घर, परिवार, समाज सब जगह उपेक्षित हैं। इसी अपेक्षा का शिकार बना विनोद 14 वर्ष की उम्र में अपने घर से चम्पाबाई के हाथों सौंप दिया जाता है, माँ–बाप सामाजिक शर्म से बचने के लिए सब कुछ बेचकर घर बदल देते हैं। सिद्धार्थ भविष्य में भी अनजान भय से मुक्त नहीं हो पाता और अपनी सन्तान के जन्म से डरा हुआ रहता है। वह डाक्टर से कहता है– ''लड़का हो या लड़की, उसे दोनों स्वीकार हैं मगर वह जरा गौर से देखकर बताए, उसका जनांग ठीक से विकसित हो रहा है न। कोई नुक्स तो नहीं। नुक्स हो तो उन्हें स्पष्ट बता दिया जाए। बच्चा गिरवा देंगे वह। अभी समय है ... बा, अपने कमरे में तुमने बिन्नी की तस्वीर क्यों टांग रखी है? सेजल की निगाह उस पर पड़ती नहीं होगी? कभी सोचा है तुमने उसके मन पर क्या प्रभाव पड़ता होगा?''[10]

लेखिका चाहती है कि समाज में उपजी किन्नर की उपेक्षा की प्रतिक्रिया स्वयं किन्नर करे और अपने लिए फैलाई गई कुप्रथाओं पर आत्मचिन्तन करें। उपन्यास का नायक विनोद खुद हिजड़ा होकर भी हिजड़ों की दुर्गति के लिए स्वयं हिजड़ों को जिम्मेदार बताने का साहस करता है क्योंकि हिजड़ा बिरादरी मुख्यधारा द्वारा हिजड़ों पर थोपे गये हिजड़ागिरी के लक्षण से स्वयं को मुक्त रखने के लिए प्रायः हाथ–पैर नहीं मारती। बधाई और भीख के अपमानजनक जुए को उतार फेंकने का प्रयास अगर कोई हिजड़ा करता भी है तो इनके सरदार ही इनके दुश्मन बन जाते हैं वे अपनी गद्दी के हिजड़ों को अपने पैर पर खड़े ही नहीं होने देते। कथा नायक विनोद जब कम्प्यूटर क्लास में दाखिला लेता है तो सरदार तितली बाई को सहज ही बर्दाश्त नहीं होता है कि उनका चेला उनकी बादशाहत से नजर फेरें। किन्नर लोग समाज में मिली उपेक्षा, सम्मानजनक अवसरों के अभाव और पथभ्रष्ट सरदारों के कारण अपराध की दुनिया में भी प्रायः डूबे हुए देखे जाते हैं– ''असामाजिक तत्वों के हाथ की कठपुतली बनने में जितनी भूमिका किन्नरों के सन्दर्भ में सामाजिक बहिष्कार–तिरस्कार की रही है, उससे कम उनके पथभ्रष्ट निरंकुश सरदारों और गुरुओं की नहीं। ऊपर से विकल्पहीनता

की कुण्ठा ने उन्हें आंधी का तिनका बना दिया।''[11]

लेखिका ने प्रत्येक व्यक्ति, स्थिति, व्यवस्था को कठघरे में ला खड़ा किया है, दूसरों के कन्धों पर बन्दूक रखना सबसे आसान है इसीलिए शुरुआत घर से होनी चाहिए जब परिवार अपने जननांग विकृति वाले बच्चों को डंके की चोट पर स्वीकारेगा तब समाज उसे कैसे प्रताड़ित कर सकेगा। संविधान शिक्षा का अधिकार देगा तो शिक्षा संस्थाएं कैसे मना करेगी। इसके साथ ही किन्नर समुदाय को भी सहयोग करना होगा क्योंकि किन्नर जिस विस्थापन उपेक्षा अपमान को वे स्वयं झेलते हैं आगे आने वाली पीढ़ियों के लिए भी वैसी ही पृष्ठभूमि तैयार कर देते हैं क्योंकि उनका उद्देश्य भी अपनी शक्ति बढ़ाना होता है– ''यह भीतर से खोखले और डरे हुए लोगों की जमाते हैं। ये चाहते हैं, जिस विशेष परिभाषा से उन्हें मण्डित किया गया है, उसी रुप में ही सही, उनकी भी एक संगठित उपस्थिति समाज में बने। उसकी ताकत का इजाफा हो।''[12]

उपन्यास की संवेदना को आत्मसात करने के लिए यह आवश्यक है कि उसे अन्त से पढ़ा जाए। अन्त यानि 'समाचार दो' जहाँ मीठी नदी में एक किन्नर की फूली हुई लाश मिलती है जिसे आपसी रंजिश एवं इस हत्या में अंडरवर्ल्ड की भूमिका की बात कही जाती है। सिर बुरी तरह धुन जाने के कारण लाश की शिनाख्त नहीं हो पाती परन्तु पाठक के मन में पूरी तरह स्पष्ट हो जाता है कि यह लाश विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ विमली की है। पूरे उपन्यास में यह एक मुख्य बिन्दु है जहां से राजनीति का घृणित स्वरूप उजागर होता है। जनता के बीच सामान्य बने रहने की बात करते हुए विधायक जी अपने क्षेत्र के मंजे हुए खिलाड़ी है। राजनेता जितना देंगे उससे अधिक वसूलना उनकी राजनीति का धर्म है विनोद को स्वीकार कर उसे आधुनिक सुविधाएं प्रदान करना उनकी सोची–समझी राजनीति का हिस्सा है वह उचित समय पर उसका उपयोग करना चाहते है यह अवसर उन्हें जल्द ही मिल जाता है। विनोद को चंडीगढ़ ले जाते समय विधायक जी की मानसिकता का कोई संकेत उपन्यास में नहीं है परन्तु विदेश से लौटे भतीजे के कुकृत्य के कारण विनोद को घटना स्थल से दूर रखना चाहते हैं। तिवारी जी बड़ी समझदारी से विनोद को व्याख्यान के लिए प्रेरित करते हैं। किन्नर सभा का आयोजन चण्डीगढ़ के स्थानीय नेताओं द्वारा किया जाता है। राजनीति के लिए हिजड़ों की दुर्दशा एक सुलगता मुद्दा है किन्तु राजनीति को हिजड़ों की समस्याओं के समाधान से ज्यादा उनके वोटों से मतलब होता है। पार्टी सदस्य भी उसे पार्टी के वोट बैंक के रुप में बदल देते हैं और हिजड़ा बिरादरी को उत्तेजित करके आरक्षण के लिए आन्दोलित करते है और इस प्रयास में विनोद को आगे रखते हैं– ''देखो, यह मुद्दा हमारे लिए शोभा भर नहीं है। साथ देगे किन्नर तो हम उनके आरक्षण की मुहिम चलाएंगे जोडेंगे उन्हें विकास के समान अवसरों से शिक्षा, रोजगार, सम्पत्ति, ऋण, बूढ़ों की पेंशन, बेरोजगार युवाओं का भत्ता लेकिन ताली एक हाथ से नहीं बजती संगठित होना पड़ेगा। आवाज उठानी पड़ेगी देशव्यापी आन्दोलन छेड़ना पड़ेगा, जेले भरनी होंगी, धरने देने होंगे। जनजीवन ठप्प कर देना होगा।''[13]

विनोद अपने भाषण में किन्नरों को शिक्षा की तरफ प्रेरित करता है, आत्मसम्मान की बात करता है। उसका मानना है स्वविवेक की जागृति आवश्यक है समाज में एक बार पुनः वापसी की तस्वीर शिक्षा के द्वारा ही मिल सकती है– ''आरक्षण निदान नहीं है, आत्मचेतना बुनियादी अधिकारों की मांग का पहला पायदान है।''[14] विनोद आरक्षण को सुधार के लिए आवश्यक नहीं मानता यही बात उसके लिए काल बनती है क्योंकि वह विधायक जी के वोट बैंक के समीकरण को पूर्णतः उलट देता है– ''क्यों विनोद सीने पर समाज सुधारक का तमगा लटकाने का शौक चर्रा आया। राजा राममोहनराय बनना चाहते हो। इसीलिए हमने भेजा था तुम्हें चंडीगढ़। वाह! तुम तो छटे हुए रणनीतिकार निकले, सरकार को सलाह देने लगे। पासा पलटने में माहिर गलत कह रहा हूँ। सभा में तुम्हें आरक्षण की बात उठानी थी और तुम पढ़ाने लगे किन्नरों को स्वाभिमान लगे समाज को चेताने। समाज से उनके अधिकार की मांग करने लगे।''[15]

विनोद अपने समाज की मांग तो करे परन्तु उसमें लिंग पूजा और किन्नर शब्द के इस्तेमाल से बचा रहे अन्यथा पार्टी का वोट बैंक बिगड़ सकता है। नेताओं का कहना है कि हिमाचल प्रदेश के लोगों ने जननांग वंचितों के लिए किन्नर शब्द का प्रयोग करने पर आपत्ति प्रकट की है क्योंकि किन्नौर के लोगों को भी किन्नर कहा जाता है इसके साथ ही भारत में प्रचलित लिंग पूजा पर भी आघात न करे वह अपनी बिरादरी के अधिकार दिलाने के लिए उन्हीं नुस्खों का प्रयोग करे जिसे हाशिए पर पड़े अन्य लोगों ने अपनाया। विनोद जानता है इस पाखण्डी समाज में उनके अधिकारों को इतनी शीघ्र नहीं माना जाएगा– ''परिवर्तन बलि माँगता है। एक पूरी पीढ़ी को बलि देनी पड़ती है। देनी होगी तब कहीं जाकर परम्परा में बदली पाखंडी रुढ़ मान्यताओं की नींव हिलती है।''[16]

लेखिका जानती हैं कि थर्ड जेण्डर को मुख्यधारा से जोड़ने का काम, उनके जीवन के उत्कर्ष का प्रयास सरल नहीं है पर असम्भव भी नहीं। परिवर्तन की यह प्रक्रिया दीर्घकालिक होती है फिर लम्बे समय से रुढ़, परम्परित पूर्वाग्रहों को केवल बातों के सहारे परिवर्तित नहीं किया जा सकता। एक या दो पीढ़ियों को अपना सर्वस्व इसी उद्देश्य को समर्पित करना होगा तभी समानता के विचार को समाज की मानसिकता में प्रत्यारोपित किया जा सकेगा– ''समाज को ऐसे लोगों की आदत नहीं है और वे आदत डालना भी नहीं चाहते पर मुझे विश्वास है, हमेशा ऐसी स्थिति नहीं रहने वाली। वक्त बदलेगा। वक्त के साथ नजरिया बदलेगा।''[17] जनगणना में राज्य सत्ता द्वारा जीरो अदर्स का कॉलम बनाकर फिर से उन्हें अन्य की श्रेणी में डालकर मुख्यधारा से काटने की साजिश हो रही है लेखिका चाहती है कि उन्हें स्त्री–पुरुष गोलेबन्दी को चुनने की स्वतंत्रता हो परन्तु थर्ड जेण्डर विमर्श पहले स्त्री विमर्श के खांचे में ही पालित–पोषित होता रहा फिर उसने अपने जननांग विकृति को आधार बनाकर ही एक नई मुहिम छेड़ी है तो उन्हें इन दो लिंगों के अन्तर्गत कैसे रखा जा सकता है।

लेखिका ने थर्ड जेण्डर विमर्श के बहाने स्त्री विमर्श को भी घेरे में लिया है विनोद स्मृतियों की पूर्व दीप्ति में डूबता–उतरता जब भी व्यथित होता है अपनी माँ को कटघरे में खड़ा करता है क्योंकि यदि माँ और पिताजी चाहते तो विनोद या विनोद जैसे बच्चों का निष्कासन रोका जा सकता है। किन्नरों की प्रमुख समस्या है– जीवनयापन के लिए स्त्री वेशभूषा धारण करना परन्तु इनके भीतर स्त्रियों को लेकर ही घोर कटुता पाई जाती है क्योंकि जन्म देने वाली यहीं होती है और इस पितृसत्तात्मक व्यवस्था में निष्कासन के निर्णय में इनकी भूमिका बहुत हद तक कमजोर पाई जाती है विनोद के मामले में देखा जा सकता है उसकी बा उसका निष्कासन रोक नहीं पाती– ''तूने, मेरी बा तूने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाइयों के हाथों मासूम बकरी सा सौंप दिया। मेरी सुरक्षा के लिए कानूनी कार्यवाही क्यों नहीं की? मनसुख भाई जैसे पुलिस अधीक्षक पापा के गहरे दोस्त के रहते हुए? जो अपने आप मुझे बचाने के लिए आ तो नहीं सकते थे। मेरे आंगिक दोष की बात पप्पा ने उनसे बांटी जो नहीं होगी। वरना वह मुझे बचाने जरूर आ जाते। बाऽऽ ... बाऽऽ .... बाऽऽ ... क्यों वह अनर्थ हो जाने दिया तूने जिसके लिए मैं दोषी नहीं था।''[18]

समाज में स्त्री दूसरी सत्ता के रूप में ही सामने आई है जो किसी भी महत्वपूर्ण फैसले में अपना योगदान नहीं दे पाती इसी का शिकार वन्दना बैन होती है चाहकर भी अपने किन्नर पुत्र को नहीं रोक पाती और उसे विनोद से बिमली बन जाना पड़ता है।

चित्रा मुद्‌गल ने कहा है– ''स्त्री ने कभी अपनी कोख को अपनी स्वायत्तता का मुद्दा नहीं बनाया। शायद इसकी वजह से पितृसत्ता का दबाव है लेकिन अब समय आ गया है कि स्त्री को अपनी कोख पर हक जताना होगा।''[19] बिन्नी की माँ अपने इसी हक को नहीं समझ पाई और अपने बेटे का त्याग कर देती है। विनोद अपने पत्रों में अपनी बा की ताकत को उजागर भी करता है परन्तु पितृसत्तात्मक व्यवस्था में फंसी बा की जिन्दगी इतनी त्रासद है कि अपने ही बेटे से वह फोन पर बात नहीं कर पाती, पत्राचार के लिए पोस्ट बाक्स नं. लेना पड़ता है विनोद कहता है– ''औरतें अपनी हिम्मत का इस्तेमाल नहीं करती। उनकी अपनी आँखे नहीं होती। वे अपनी आँखों को आँखों के कोटरो से स्वयं अपने हाथ निकालकर अपने पति और बच्चों की जेबों में सरका देती हैं।''[20] उपन्यास के अन्त में वन्दना बेन ने अपने मरने से पूर्व ही सही लेकिन अपनी भूल का, परिष्कार करते हुए सार्वजनिक रूप से अपने किन्नर बेटे विनोद से माफी मांगते हुए उसे अपनी संतान होने का अधिकार सुख दिया, वैसे ही एक दिन दूसरे किन्नर बच्चों के माँ–बाप भी अपने बच्चों को घर वापसी का, उन्हें समाज की रुढ़िगत परम्परा को छोड़कर निर्द्वन्द्व हो स्वीकारने का साहस अर्जित कर सकें।

सत्रह पत्रों के माध्यम से लगभग पाँच महीने यह कथा मानों किन्नर समुदाय की पूरी जीवन गाथा कहती है। उपन्यास कथ्य के साथ ही शिल्प की दृष्टि से भी विशिष्ट है। पत्रात्मकशैली इसे विलक्षण बनाती है हिन्दी में इस तरह के प्रयोग बहुत कम हुए हैं तसलीमा नसरीन का एक उपन्यास है– 'दो औरतों के पत्र'। यह पत्रात्मक शैली में लिखा गया है परन्तु दोनों उपन्यासों के मध्य एक प्रमुख अन्तर यह है कि 'दो औरतों के पत्र' उपन्यास में दोनों पक्षों से पत्राचार की अवस्था सक्रिय है किन्तु पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा में विनोद अकेला ही एकालाप करता है अपनी बा की लिखी बातों की सूचना वह खुद देता है। समकालीन साहित्य में जहां कहीं किन्नरों पर लिखा गया है वहां मुख्य उद्देश्य उनकी दयनीय स्थिति का चित्रण और समस्याएं उठाने भर से साहित्य की इतिवृत्ति मान ली गई है परन्तु चित्रा मुद्‌गल ने अपने लेखकीय कर्तव्य का निर्वहन करते हुए उपन्यास के माध्यम से तीसरे खाने का बहिष्कार कर अपना लिंग चुनने की स्वतंत्रता का आवाह्न किया है और घर वापसी का मार्ग सुझाया है। लेखिका के गुजराती संस्कृति को कथा का हिस्सा बनाने के पीछे यह मंशा है कि यह समाज अपेक्षाकृत खुला समाज है और ऐसी आकांक्षाओं को सहज स्वीकृति दे सकता है अतः घर वापसी की शुरूआत एक खुले समाज से हो तो अधिक सशक्त शुरूआत होगी।

सन्दर्भ सूची

1. चित्रा मुद्‌गल, पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण : 2019, पृ. 49
2. वही, पृ. 15
3. वही, पृ. 13
4. वही, पृ. 24
5. वही, पृ. 33
6. वही, पृ. 09
7. वही, पृ. 42
8. वही, पृ. 205
9. वही, पृ. 50
10. वही, पृ. 22
11. वही, पृ. 86
12. वही, पृ. 50
13. वही, पृ. 153
14. वही, पृ. 187
15. वही, पृ. 189
16. वही, पृ. 187
17. वही, पृ. 10
18. वही, पृ. 13
19. 'ओपिनियन पोस्ट' के लिए चित्रा मुद्‌गल के द्वारा दिए गए साक्षात्कार का एक अंश, साक्षात्कारकर्ता – संध्या द्विवेदी, दिनांक 16.08.2016
20. चित्रा मुद्‌गल, पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण : 2019, पृ. 33